DSE-1

Unit-1

(1) तुलसीदास की भक्ति भावना :-

तुलसीदास रामभक्ति शाखा के सर्वोच्च कवि हैं। उन्होंने भगवान राम को अपना इष्टदेव माना है। तुलसी का भक्ति मार्ग वेदशास्त्र पर आधारित है। कवि के रूप में उन्होंने अपने साहित्य में श्रवण, कीर्तन, स्मरण, अर्चन और आत्मनिवेदन इस सभी पक्षों का प्रतिपादन बड़े ही कुशलतापूर्वक किया है। वस्तुतः तुलसीदास जी एक उच्चकोटि के कवि और भक्त थे तथा उनका हृदय भक्ति के पवित्रतम भावों से परिपूर्ण था। वे राम के अनन्य भक्त हैं। उन्हें केवल राम पर ही विश्वास है। उन्होंने चातक को अपनी भक्ति का परम आदर्श माना है। तुलसीदास जी का विचार है कि वाक्य ज्ञान की अपेक्षा तत्व ज्ञान से भक्ति की प्राप्ति संभव है। चातक की निष्कामता द्वारा उन्होंने अपने भक्ति-रूप को व्यक्त किया है -

'जन कहाय नाम लेत हौं, किये पन चातक ज्यों प्यास
प्रेम पन की।'

तुलसी की भक्ति दास्य-भाव की है। उन्होंने स्वयं को 'श्रीराम' का दास माना है। उन्होंने श्रीराम के समक्ष स्वयं को दीन, लघु, अधम, विनम्र और महापतित माना है।

भक्ति के प्रकार-

हृदय का पवित्रतम भाव है भक्ति। यह भक्तिभाव सर्वप्रथम श्रद्धा के रूप में अंकुरित होता है। यह श्रद्धा तीन प्रकार की होती है- सात्विकी, राजसी और तामसी।

श्रद्धा के इन तीन रूपों के आधार पर भक्ति को भी तीन कोटियाँ होती है -

(1) सात्विकी भक्ति
(2) राजसी भक्ति
(3) तामसी भक्ति

विनय पत्रिका और रामचरित मानस इन तीनों में तुलसीदास जी ने भक्ति-रूपों की विशद् चर्चा की है। रावण राजसी और तामसी भक्ति का उपासक था, जबकि गोस्वामी तुलसीदास जी को सात्विकी भक्ति प्रिय थी। सात्विकी भक्ति मिल जाये, यही उनकी कामना है -

"चहौं न सुगति सुमति सम्पति, कछु रिद्धि सिद्धि विपुल बड़ाई।
हेतु रहित अनुराग राम-पद, बढ़ै अधिकाई।

नवधा भक्ति :-

नवधा भक्ति का निरूपण तुलसीदास जी ने रामचरित मानस और विनय पत्रिका दोनों ही ग्रंथों में किया है।

रामचरितमानस के शबरी-प्रसंग से नवधा-भक्ति का निरूपण इस प्रकार से हुआ है -

"प्रथम भगति संतन कर संगा, दूसरि रति मम कथा प्रसंगा।

विनय-पत्रिका में भी नवधा-भक्ति का यही रूप होता है।

भक्ति की विशेषतायें :-

गोस्वामी तुलसीदास जी श्रीराम के अनन्य-आराधक हैं। परंतु कहीं भी उन्होंने किसी अन्य देवी-देवता की निन्दा नहीं की है। किन्तु राम को ही सर्वोपरि मानकर उन्हीं के चरणों में श्रद्धा-सुमन अर्पित किये हैं।

तुलसीदास जी की भक्ति की प्रमुख विशेषताओं की विवेचना निम्नानुसार की जा सकती है-

1. सेवक-सेव्य भाव की भक्ति -

तुलसी के इष्टदेव मर्यादा पुरुषोत्तम राम है। उन्होंने अपने आराध्य के प्रति भक्ति-भावना के प्रसून अर्पित करते समय उन्हें अपना स्वामी और स्वयं को सेवक माना है। उनका विश्वास है कि बिना इसके संसार-सागर से उद्धार नहीं हो सकता है। इसलिए उनका मत है कि - 'सेवक-सेव्य-भाव बिन भव न तरिय उरारि।' अतः स्पष्ट है कि तुलसी की भक्ति सेवक-सेव्य भाव की अर्थात् दास्य-भाव की है।

2. भक्ति की अन्यता -

तुलसी राम जी के अनन्य भक्त है। तुलसी की भक्ति में श्रद्धा तथा विश्वास का अद्भुत समन्वय है -

'राम सों बड़ो है कौन, मोसों कौन छोटो।
राम सों खरो है कौन, मोसों कौन खोटो।।'

3. तुलसी के इष्टदेव का स्वरूप -

तुलसी ने अपने इष्टदेव के स्वरूप का वर्णन करते हुए उन्हें निर्गुण एवं सगुण, निराकार एवं साकार दोनों स्वरूपों से स्वीकार किया है। तुलसी ने राम जी को "विश्वरूप रघुवंश मनि।" कहकर विराट रूपधारी बताया है। तुलसी ने राम वस्तुतः राम जी के अनन्त गुण है।

"नट इव कपट चरित करि नाना।
सदा स्वतन्त्र राम भगवान ॥"

4. सत्संग की महत्ता का प्रतिपादन :-

तुलसी ने भक्ति प्राप्ती के लिए सत्संग को सर्वश्रेष्ठ बताया है। इसके अतिरिक्त ज्ञान और वैराग्य को भी भक्ति का साधन बताया है। तुलसी ने तप, संयम, श्रद्धा, विश्वास, प्रेम, ईश्वर कृपा, प्रभु की शरणागति को भी भक्ति का प्रमुख साधन सिद्ध किया है।

5. आराध्य के चरणों में सम्पूर्ण समर्पण :-

कभी भक्त जब दुष्कृत्यों से भरे अपने विगत जीवन पर ~~दृष्टिपात~~ दृष्टिपात करता है तो अनुताप से भर जाता है। उसका यह अनुताप विनय-पत्रिका की इन पंक्तियों में दृष्टव्य है-

'जनम गयो बादहिं बर बीति।
परमारथ पाले न परयो कछु अनुदिन अधिक अनीति।'

गोस्वामी तुलसीदास जी ने अपने को सर्वस्वरूपेण इष्टदेव श्रीराम के चरणों में अर्पित कर दिया है। भक्त का विश्वास है कि इष्टदेव मुझे चाहे जिस रूप में अपनावे मेरा तो सर्वभावेन हित ही है-

'ब्रह्म तू हौं जीव, तू ठाकुर हौं चेरो।
तात मात गुरु सखा तू सब विधि हितू मेरो।'

6. भक्ति के सरल एवं व्यावहारिक रूप का प्रतिपादन:-
तुलसी ने भक्ति को सरल और व्यावहारिक रूप में अपने काव्य में प्रस्तुत किया है। 'केशव कहि न जाय का कहिये।' वाले पद में कवि ने दार्शनिक मतों के सम्बन्ध में जिज्ञासा प्रकट की है, अन्त में सभी मतों को मन को भ्रमित करने वाला निरूपित किया गया है-

'तुलसीदास परिहरै तीनि भ्रम, सो आपन पहिचानै।'
तुलसीदास प्रभु यहि पथ रहि अविचल हरि-भक्ति लहौंगो।'

7. निष्काम भावना:-
सच्ची भक्ति की प्रमुख विशेषता है- निष्कामता। निष्काम भाव से जो भक्ति की जाती है, वही सर्वश्रेष्ठ है। तुलसी की भक्ति इसी प्रकार की थी। वह राम को इसीलिए भजते थे कि राम उन्हें प्रिय है। उनकी भक्ति का कारण भी यही है-

'जौ जगदीश तौ अति भलौ, जौ महेस तौ भाग।
तुलसी चाहत जनम भरि, रामचरण अनुराग।।'

निष्कर्ष:-
निष्कर्ष रूप से कहा जा सकता है कि तुलसी की भक्ति पद्धति में विनय, प्रेम, आशक्ति की प्रबलता होकर भी दैन्य का आधिक्य है। ईश्वर की कृपा को तुलसी ने सर्वोपरि माना है। तुलसी की भक्ति सात्विक भक्ति है। तुलसी की इस भक्ति में यश, ख्याति, ऐश्वर्य-प्राप्ति की आकांशा नहीं है। संक्षेप में कहा जा सकता है कि तुलसी भक्तिकाल की रामभक्ति शाखा के सर्वोच्च कवि है।

~~तुलसी का समन्वयवाद:~~

तुलसी और उनका युग—

गोस्वामी तुलसीदास हिंदी साहित्य के महान कवि थे। अधिकांश विद्वान तुलसीदास का जन्म स्थान राजापुर को मानने के पक्ष में हैं। राजापुर उत्तरप्रदेश के चित्रकूट जिला के अंतर्गत स्थित एक गाँव है। वहाँ आत्माराम दुबे नामक एक प्रतिष्ठित सरयूपारीण ब्राह्मण रहते थे। उनकी धर्मपत्नी का नाम हुलसी था। संवत 1554 के श्रवण मास के शुक्ल पक्ष की सप्तमी तिथि के दिन अभुक्त मूल नक्षत्र में इन्हीं दम्पति के यहाँ तुलसीदास का जन्म हुआ था। प्रचलित जनश्रुति के अनुसार शिशु बारह महीने तक माँ के गर्भ में रहने के कारण अत्यधिक हृष्ट-पुष्ट था और उसके मुँह में दांत दिखाई दे रहे थे। जन्म लेने के साथ ही उसने राम नाम का उच्चारण किया जिससे उसका नाम रामबोला पड़ गया। पिता ने किसी अनिष्ट से बचने के लिए बालक को चुनियाँ नाम की एक दासी को सौंप दिया और स्वयं विरक्त हो गये। जब रामबोला साढ़े पाँच वर्ष का हुआ तो चुनियाँ भी नहीं रही। वह गली-गली भटकता हुआ अनाथों की तरह जीवन जीने को विवश हो गया।

बचपन:—

भगवान शंकरजी की प्रेरणा से रामशैल पर रहनेवाले श्री अनन्तानंद जी के प्रिय शिष्य श्री नरहरि जी ने रामबोला के नाम से बहुचर्चित हो चुके इस बालक को ढूँढ निकाला और विधिवत उसका नाम तुलसीराम रखा। इसके उपरांत संवत 1561 माघ शुक्ल पंचमी को उसका

यज्ञोपवीत संस्कार संपन्न कराया। संस्कार के समय भी बिना सिखाये ही बालक रामबोला ने गायत्री-मंत्र का स्पष्ट उच्चारण किया, जिसे देख सभी चकित हो गये। इसके बाद नरहरि बाबा ने वैष्णवों के पाँच संस्कार करके बालक को राम-मन्त्र की दीक्षा दी और अयोध्या में ही रहकर उसे विद्याध्ययन कराया।

ज्येष्ठ शुक्ल त्रयोदशी, संवत् 1583 को राजापुर से थोड़ी ही दूर यमुना के उस पार स्थित एक गाँव की अति सुंदरी कन्या रत्नावली के साथ उनका विवाह हुआ। अतः कुछ समय के लिए वे काशी चले गये और वहाँ शेषसनातन जी के पास रहकर वेद-वेदांग के अध्ययन में जुट गये। पर जब पत्नी के याद में व्याकुल तुलसीराम भयंकर भयंकर अँधेरी रात में यमुना नदी तैरकर अपनी पत्नी के पास पहुँचे और उसी समय घर चलने के लिए कहा- तभी इस अप्रत्याशित जिद से खीझकर रत्नावली ने एक दोहे के माध्यम से जो शिक्षा दी उसने ही तुलसीराम को तुलसीदास बना दिया। रत्नावली ने जो दोहा कहा वह इस प्रकार है -

अस्थि चर्म मय देह यह, ता सों ऐसी प्रीति।
नेकु जो होती राम से, तो काहे भव-भीत?

यह दोहा सुनते ही उन्होंने अपनी पत्नी को वहीं उसके पिता के घर छोड़ वापस अपने गाँव राजापुर आ गये। कुछ काल राजापुर रहने के बाद वे पुनः काशी चले गये और वहाँ की जनता को रामकथा सुनाने लगे। वहाँ उनकी मुलाकात हनुमान जी से हुई। हनुमान जी से मिलकर तुलसीदास ने उनसे श्रीरघुनाथ जी का दर्शन कराने की प्रार्थना की। चित्रकूट पहुँचकर रामघाट

में उन्हें श्रीराम जी के दर्शन प्राप्त हुए। तुलसीदास भगवान श्रीराम जी की अद्भुत छवि को निहार कर अपने शरीर की सुध-बुध ही भूल गये।

तुलसीदास जी प्रयाग से पुनः काशी आ गए और प्रह्लाद घाट में निवास किया। संवत् 1631 का प्रारम्भ हुआ। देवयोग से उसवर्ष रामनवमी के दिन वैसा ही योग आया जैसा त्रेतायुग में राम जन्म के दिन था। उस दिन प्रातः काल तुलसीदास जी ने श्रीरामचरितमानस की रचना प्रारम्भ की। दो वर्ष सात महीने और छब्बीस दिन में रामचरितमानस ग्रंथ संपन्न हुआ। राम-विवाह के दिन सातों काण्ड पूर्ण हो गये।

तुलसीदास की रचनाएँ -

अपने 126 वर्ष के दीर्घ जीवन काल में तुलसीदास जी ने कालक्रमानुसार निम्नलिखित कालजयी ग्रंथों की रचनाएँ की -

रामललानहछ, वैराग्यसंदिपनी, रामाज्ञाप्रश्न, जानकीमंगल, रामचरितमानस, सतसई, पार्वतीमंगल, गीतावली, विनय-पत्रिका, कृष्ण गीतावली, बरवै रामायण, दोहावली और कवितावली।

इसमें से रामचरितमानस, विनय-पत्रिका, कवितावली, गीतावली जैसी कृतियों के विषय में किसी कवि का यह आर्षवाणी सटीक प्रतीत होती है - पश्य देवस्य काव्यं, न ममार न जीर्यति। अर्थात देवपुरुषों का काव्य देखिए जो न मरता न पुराना होता है।

कुछ ग्रंथों का संक्षिप्त विवरण –

(i) रामललानहछू – यह संस्कार गीत है। इस गीत में कतिपय उल्लेख राम विवाह की कथा से भिन्न है।

गौद लिहें कौशल्या बैठि रामहिं वर हो।
सोभित दूलह राम सीस, पर आंचर हो॥

(ii) बरवै रामायण – विद्वानों ने इसे तुलसी की रचना घोषित किया है। शैली की दृष्टि से यह तुलसीदास की प्रामाणिक रचना है। इसकी खंडित प्रति ही ग्रंथावली से संपादित है।

(iii) पार्वती मंगल – यह तुलसी की प्रामाणिक प्रतीत होती है। इसकी काव्यात्मक प्रौढ़ता तुलसी सिद्धांत के अनुकूल है।

(iv) गीतावली – गीतावली में गीतों का आधार विविध कांड का रामचरित ही रहा है। यह ग्रंथ रामचरितमानस की तरह व्यापक जन संपर्क में कम गया प्रतीत होता है। इसलिए इन गीतों में परिवर्तन-परिवर्द्धन दृष्टिगत नहीं होता है।

(v) श्रीकृष्ण गीतावली – श्रीकृष्ण गीतावली भी गोस्वामी जी की रचना है। श्रीकृष्ण कथा के कतिपय प्रकरण गीतों के विषय है।

श्री रामचरितमानस अवधी भाषा में गोस्वामी तुलसीदास द्वारा रचित एक महाकाव्य है। इसे सामान्यतः तुलसी रामायण या तुलसीकृत रामायण भी कहा जाता है। यह भारतीय संस्कृति में एक विशेष स्थान रखता है।

इसी रचना से तुलसीदास जी को विशेष रूप से ख्याति मिली।

रामचन्द्र शुक्ल जी का कथन है "यह एक कवि ही नहीं हिंदी को प्रौढ़ साहित्य भाषा साहित्य साबित करने के लिए काफी है।"

तुलसीदास जी को लेकर हरिऔध जी का कथन है:
"कविता कर के तुलसी न लसे
कविता लसि या तुलसी की कला"
तुलसीदास जी अपने पाँच इन्द्रियों को वश में किया था जिसके कारण उनके नाम के आगे गोस्वामी उपनाम का प्रयोग हुआ।

गोस्वामी तुलसीदास हिंदी साहित्य के सर्वश्रेष्ठ कवि एवं विचारक माने जाते हैं। महाकवि अपने युग का निर्माता होता है इस कथन की पुष्टि गोस्वामी जी की रचनाओं में सिद्ध होती है। तुलसीदास भक्तकवि शिरोमणि थे। उन्होंने लोकसंग्रह के लिए सगुण उपासना का मार्ग चुना और रामभक्ति के निरूपण को अपने साहित्य का उद्देश्य बनाया। कवि के रूप में उन्होंने श्रवण, कीर्तन, स्मरण, पादसेवन, अर्चन, वंदन, दास्य, साख्य और आत्मनिवेदन इन सभी पक्षों का प्रतिपादन बड़े ही कुशलतापूर्वक किया। वे संस्कृत के प्रकाण्ड पंडित थे। उन्होंने ब्रज और अवधी दोनों भाषाओं में साहित्य की रचना की।

तुलसी के युग में धार्मिक, सामाजिक, राजनीतिक मूल्य अपना महत्व खो चुके थे। समाज उच्चवर्ग और निम्नवर्ग की दो गहरी खाइयों में बँटा हुआ था। उच्च सामंतवर्ग जहाँ एक ओर वैभव विलासपूर्ण जीवन में

लिप्त थे। तो गरीब वर्ग जीवन की आवश्यकताओं से भी वंचित था। तुलसी के काव्य में उपलब्ध

खेती न किसान कौ,
बनिक को बनिज न
भिखारी कौ न भीख बलि
चाकर को चाकरी

पंक्तियाँ उनके युग के समाज की दयनीय दशा की ओर संकेत करती है। धन के मद में डूबे शासक वर्ग को शोषित एवं सत्रास्त जनसमाज की कोई चिंता न थी। सामाजिक क्षेत्रों में वर्ण-व्यवस्था का बोलबाला था। उचनीच का भेदभाव समाज को खोखला बना रहा था। पारिवारिक जीवन विश्रृंखलित हो रहा था और स्त्री पूर्णतः पुरुष पर आश्रित थी, जिसकी स्वयं की कोई आवाज और अधिकार न थी। अपने युगीन समाज की दुर्दशा को देखकर तुलसी का विक्षुब्ध मन इन सभी विकृतियों को दूर करने के लिए व्याकुल हो उठा। उन्होंने अनुभव किया कि राम के आदर्श स्वरूप को जन-जन में पहुँचाये बिना समाज का उत्थान नहीं हो सकता। सगुण भक्ति, राम के रूप में सभी सामाजिक संबंधों का आदर्श और आदर्श शासक के उनके सभी स्वप्न 'रामचरितमानस' में प्रतिफलित हुए।

तुलसीदास जी की मृत्यु—

तुलसीदास के निधन के बारे में कहा जाता है कि इनकी मृत्यू बीमारी के कारण हुई थी और इन्होंने अपने जीवन के अंतिम पल वाराणसी के अस्सी घाट में बिताए थे। ऐसा कहा जाता है कि उन्होंने अपने जीवन के अंतिम

समय में विनय - पत्रिका लिखी थी और इस पत्रिका पर भगवान राम ने हस्ताक्षर किए थे। इस पत्रिका को लिखने के बाद तुलसीदास जी का निधन हो गया था।

"संवत् 1680 सौ असी
असी गंगा के तीर।
श्रवण श्यामा तीज
सनी तुलसी तज्यों शरीर॥"

निष्कर्ष -

गोस्वामी तुलसीदास केवल भक्तिकाल के ही नहीं अपितु पुरे हिंदी साहित्य के सर्वश्रेष्ठ कवि हैं। हिंदी साहित्य में महाकवि तुलसीदास जी का युग सदा अमर रहेगा। वे राम के अनन्य भक्त है। उन्हें केवल राम पर ही विश्वास है। इस प्रकार तुलसी अपने युग के श्रेष्ठ कवि, विचारक के रूप में जाने जाते हैं।

रामकाव्य परम्परा और तुलसी

भारतीय सांस्कृतिक परम्परा में रामभक्ति काव्य में स्रोत आदि काव्य 'रामायण' में मिलते हैं। रामकाव्य परम्परा में बाल्मीकि को आदिकवि तथा 'रामायण' को आदि काव्य माना गया है। भारतीय संस्कृति में राम के चरित्र को भाव नायक के रूप में माना गया है।

रवीन्द्रनाथ टैगोर ने अपने निबंध भारत वर्ष में इतिहास धारा में कहा है कि, "बाल्मीकि ने सर्वप्रथम नरकाव्य का प्रवर्तन किया'। बौद्ध विद्वानों ने राम को 'बोधिसत्व' मानकर रामकथा को अपने जातक साहित्य में स्थान दिया। जैन कवियों द्वारा भी रामकथा को लेकर काव्य रचनाएँ हुई। संस्कृत साहित्य में रामकथा को आधार बनाकर नाटक व महाकाव्यों की रचना व्यापक रूप से हुई है। कालिदास ने रघुवंश में पुरी रघुवंश की परम्परा का वर्णन किया है।

हिंदी काव्य में रामभक्ति परम्परा :-

हिंदी साहित्य में तुलसी पूर्व कवियों में रामानन्द अग्रणीय हैं। ये कवि, समाज सुधारक यायावर प्रकृति के व्यक्ति थे। हिंदी-भाषा-भाषियों के लोकजीवन में रामभक्ति का प्रस्फुटन इनके द्वारा ही हुआ। रामानंद ने सर्वप्रथम राम-सीता के साथ भक्ति साधना के लिए हनुमान की भी स्तुति की। ईश्वरदास ने रामकथा को आधार बनाकर दो ग्रंथ लिखे, भरत मिलाप और अंगदपैज भरतमिलाप में करुण प्रसंग को दिखाया गया है। तथा अंगदपैज में अंगद की वीरता का चित्रण हुआ है।

रामभक्ति परम्परा में तुलसी -

तुलसीदास हिंदी साहित्य की रामभक्ति परम्परा के सशक्त आधार स्तंभ है। तुलसी के पहले और बाद में भी हिंदी साहित्य में रामभक्ति काव्य की परम्परा मिलती है, किन्तु रामभक्ति को जन-जन में प्रसारित करने और राम के नाम को भक्ति क्षेत्र में सर्वोपरि स्थान दिलाने में तुलसीदास का महत्वपूर्ण योगदान है। सामाजिक दृष्टि से अका महत्व इस दृष्टि से और भी बढ़ जाता है कि उन्होंने न केवल रामभक्ति को अपनी कविता का उद्देश्य बनाया अपितु समसामयिक राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक एवं धार्मिक परिस्थितियों के अनुरूप राम के आदर्श चरित्र का जो रूप प्रस्तुत किया, उससे उन्हें व्यापक लोक मान्यता प्राप्त हुई।

तुलसीदास रामभक्ति काव्य परम्परा में सर्वश्रेष्ठ कवि है। अन्होंने प्रत्येक दृष्टि से राम काव्य को हिंदी साहित्य के शिखर पर पहुँचाया है। इनके द्वारा बचे बारह ग्रंथ प्रामाणिक माने गये है। तुलसीदास ने अपने 'रामचरितमानस' को भाषा, रस, अलंकार, काव्यसौंदर्य, चरित्रचित्रण आदि काव्य गुणों को चरमोत्कर्ष पर पहुँचाया है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने अपने साहित्येतिहास में लिखा है, "यह एक कवि ही हिंदी को प्रौढ़ साहित्यिक भाषा सिद्ध करने के लिए काफी है।"

गोस्वामी तुलसीदास का प्रादुर्भाव हिंदी साहित्य में ऐसे समय पर हुआ जब मध्यकाल का अस्थिर दौर चल रहा था। सामाजिक व्यवस्था चरमरा चुकी थी। भारतीय जनता मुगल शासकों के शासन में ग्रस्त थी। भारतीय संस्कृति को समग्रता से एक कर सके ऐसे युग प्रेरणा की

आवश्यकता जब महसुस हुई। उसी रूप में तुलसी का आगमन हिंदी साहित्य में हुआ।

तुलसी वेद, पुराण, उपनिषद् तथा विभिन्न दार्शनिक मतों के मर्मज्ञ थे। वे संस्कृत के प्रकाण्ड ज्ञाता थे। तुलसी पूर्व रामभक्ति का जो वातावरण रामानंद ने सम्पूर्ण उत्तर भारत में तैयार कर दिया था। रामभक्ति काव्य की सबसे प्रौढ़ रचना 'रामचरितमानस' है तथा तुलसी द्वारा रचित जो बारह ग्रंथ प्रामाणिक माने गये हैं, उनमें सबसे अधिक काव्य प्रतिभा हमें इस ग्रंथ में मिलती है। तुलसीदास ने रामकथा को लेकर भारतीय जनता के लिए एक ऐसा नर-नारी चरित्र लिखा जिसका आदर्श रूप वर्तमान समाज में भी वही स्थान रखता है जो तुलसी के समकालीन था।

तुलसीकृत रामकाव्य में जो मर्यादा, समन्वय तथा लोकसंग्रह की धारणा प्रस्तुत हुई है वह भक्तिकालीन अन्य किसी ग्रंथ में दुर्लभ है।

तुलसी की भक्ति दास्य भाव की है। कवि अहं को नष्ट करते हुए तुलसी ने इन पंक्तियों का प्रणयन किया है-

"कवित विवेक एक नहिं मोरें"

तुलसी साहित्य में हमें समाजसुधार, उनके समय की देशदशा, सामंत विरोधी तत्व, ब्राह्मणत्व विरोधी धाराएँ आदि सभी मानवतावादी दृष्टि देखने को मिलते हैं।

निष्कर्ष-

तुलसीदास ने बाल्मीकि रामायण को नये कलेवर व नवीन रूप में रचकर भारतीय जनमानस में हृदय में व्याप्त निराशा की गहराई को आशा में पल्लवित किया। उन्होंने

रामकाव्य को प्रत्येक दृष्टि से चरमोत्कर्ष पर पहुँचाया। उनका साहित्य, भाषा, अलंकार, काव्य सौन्दर्य, धर्म, शास्त्र, लोक तथा मानवीयता आदि सभी रूपों से प्रौढ़ है। चरित्र चित्रण में उनकी प्रतिभा सर्वतमुखी है। तुलसीदास ने रामकथा को लेकर भारतीय जनता को ऐसा नर-नारी चरित्र दिया है जिसकी आदर्श रूप वर्तमान समय में भी वही स्थान रखता है जो उनके समकालीन था।

Unit-II

Date Page 17

तुलसीदास और उनकी प्रमुख रचनाएँ :-

गोस्वामी तुलसीदास सर्वश्रेष्ठ कवि एवं विचारक माने जाते हैं। महाकवि अपने युग का द्रष्टा एवं निर्माता होता है। इस कथन की पुष्टि गोस्वामी जी की रचनाओं से सिद्ध होती है।

हिंदी साहित्य के महान कवि संत तुलसीदास जी का जन्म संवत् 1554 की श्रावण शुक्ल सप्तमी के दिन हुआ था। इनके पिता का नाम आत्माराम दुबे एवं माता का नाम हुलसी था। जन्म के समय तुलसीदास रोए नहीं थे अपितु उनके मुँह से "राम" शब्द निकला था। कहा जाता है कि विवाह के पश्चात पत्नी के धिक्कारने के बाद वे गृहस्थ जीवन का त्याग करके साधुवेश धारण कर लिया। कहा जाता है कि संवत् 1631 में तुलसीदास ने रामचरितमानस की रचना प्रारम्भ कर दी और दो वर्ष सात महीने 26 दिनों में ग्रंथ की रचना पूरी कर ली।

अपने दीर्घ जीवन काल में तुलसीदास ने कालक्रमानुसार निम्नलिखित कालजयी ग्रंथों की रचनाएँ की -

रामलला नहछू, वैराग्य संदीपनी, रामाज्ञा प्रश्न, जानकीमंगल, रामचरितमानस, सतसई, पार्वतीमंगल, गीतावली, विनय-पत्रिका, कृष्ण गीतावली, दोहावली, बरवै रामायण, कवितावली और हनुमानबाहुक आदि।

रामचरितमानस गोस्वामी तुलसीदास जी की लोकप्रिय ग्रंथ रहा है। तुलसीदास ने अपनी रचनाओं के संबंध में कहीं उल्लेख नहीं किया है। इसलिए प्रामाणिक रचनाओं के संबंध में अंतस्साक्ष्य का अभाव दिखाई देता है। नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित ग्रंथ इस प्रकार है-

(1) रामचरितमानस (2) रामलला नहछु (3) वैराग्य संदीपनी
(4) बरवै रामायण (5) पार्वती मंगल (6) जानकी मंगल
(7) रामाज्ञा प्रश्न (8) दोहावली (9) कवितावली
(10) गीतावली (11) श्रीकृष्ण गीतावली (12) विनय-पत्रिका
(13) सतसई (14) छंदावली रामायण (15) कुंडलिया रामायण
(16) राम शलाका (17) संकट मोचन (18) करखा रामायण
(19) रोला रामायण (20) झूलना (21) छप्पय रामायण
(22) कवित्त रामायण (23) कलिधर्माधर्म निरूपण

रचनाओं का परिचय :—

(1) रामचरितमानस – रामचरितमानस की रचना गोस्वामी तुलसीदास जी ने संवत 1631 में की थी। यह सात काण्डों में विभक्त है। यह प्रख्यात ग्रंथ मानव जीवन का महाकाव्य है। इसमें मर्यादा पुरुषोत्तम राम के व्यक्तित्व में नर और नारायण का आदर्श समन्वित है। यह अवधी भाषा में लिखी गयी है।

(2) रामलला नहछु – इसमें विवाह के अवसर पर गाये जानेवाले 20 सोहर छंद संगृहित है। इसमें लोक संस्कृति का स्वरूप मिलता है। इसमें राम साधारण दूल्हे के रूप में उपस्थित किये गये है। इस ग्रंथ में तुलसी मर्यादावादी के स्थान पर यथार्थवादी के रूप में उपस्थित हुए है।

(3) वैराग्य संदीपनी – यह कृति गोस्वामी जी की प्रारंभिक रचना जान पड़ती है। इसमें कुल दोहे दोहावली तथा कुछ अन्य ग्रंथों के है। यह वैरागियों और साधु सन्यासियों के लिए लिखी गई कृति है।

(4) बरवै रामायण - बरवै रामायण समय समय पर लिखे गये छंदों का संकलन है। वेणी माधवदास जी इसकी रचना संवत् 1669 में मानते हैं। इसमें कुल मिलाकर 69 छंद हैं जो सात काण्ड में विभाजित है। इन छंदों में गोस्वामी जी ने ललित भावों अभिव्यक्ति दी है।

(5) पार्वती मंगल - इसमें शिव पार्वती के परिणय का प्रसंग है। यह एक खण्डकाव्य है। 'पार्वतीमंगल' की कथा का आधार कालिदास रचित 'कुमार सम्भवम' नामक ग्रंथ है। इस ग्रंथ की रचना संवत् 1603 वि. में हुआ। 'पार्वतीमंगल' में पार्वती-वटु सम्वाद, तापस्या वैवाहिक कृत्य आदि का मार्मिक चित्रण है। इसमें 64 छंद है।

(6) जानकी मंगल - यह ग्रंथ 'पार्वती मंगल' की शैली पर लिखा गया है। यह 216 छंदों में समाप्त हुआ है। लोक संस्कृति, आस्थाओं और विश्वासों का वर्णन ही इस रचना में हुआ है। इस ग्रंथ का प्रमुख उद्देश्य विस्तारपूर्वक वैवाहिक मंगलाचारों का वर्णन करता है।

(7) रामाज्ञा प्रश्न - इसका रचनाकाल संवत् 1624 वि है। इसीको कुछ विद्वानों ने दोहावली का नाम दिया है। इन दोहे में रामचरित्र वर्णन के 343 छंद है। रामाज्ञा प्रश्न में वर्णित कथा पर बाल्मिकी रामायण की कथा का अधिक प्रवाह है।

(8) कवितावली - यह ग्रंथ क्रमबद्धता से परिपूर्ण नहीं है। ऐसा जान पड़ता है कि विभिन्न ग्रंथों की रचना करते समय जो भाव कवित्त सवैयों में बाँधकर लिखते गये उनमें कुछ और जोड़कर किया गया संग्रह ही कवितावली है। यह ग्रंथ सरस, मधुर और मौजपूर्ण छंदों से परिपूर्ण है।

कवितावली का रचनाकाल संवत् 1665 से लेकर संवत् 1671 तक ठहराया है।

(9) विनयपत्रिका - रामचरितमानस के उपरांत तुलसीदास के ग्रंथों में 'विनयपत्रिका' सबसे अधिक प्रसिद्ध है। इसमें कवि युग की कुचाल से पीड़ित होकर गोस्वामी राम के पास अपनी पत्रिका भेजते हैं। गोस्वामी जी भगवान राम के समस्त दरबारियों को मिलाकर बड़े सुंदर ढंग से पत्रिका राम के समक्ष प्रस्तुत कराते हैं।

निष्कर्ष -

तुलसीदास जी ने इस प्रकार न सिर्फ महान विचारों में रामचरितमानस एवं हनुमान चालीसा जैसी कई उत्कृष्ट ग्रंथों की रचना की, बल्कि अपने प्रेरणादायक दोहों से लोगों को सकारात्मक जीवन जीने की प्रेरणा दी।

तुलसी का समन्वयवाद

समन्वय की चेष्टा के ही कारण तुलसी को लोकनायक माना जाता है। "तुलसीदास कलिकाल के बाल्मीकि है, मुगल शासन काल के सबसे बड़े व्यक्ति हैं और कदाचित महात्मा बुद्ध के पश्चात भारत के सबसे बड़े व्यक्ति हैं और कदाचित महात्मा बुद्ध के पश्चात भारत के सबसे बड़े लोकनायक है।" तुलसी के समय के पश्चात का कोई आदर्श नहीं था। ऊंचे वर्ग के लोग ऐशो आराम में डूबे हुए थे तथा जो निम्नवर्ग के थे वे अशिक्षित थे। सामाजिक मर्यादा तो थी ही नहीं कोई भी व्यक्ति सिर मुड़ाकर सन्यासी हो जाता था। इन्हीं पाबंदियों के द्वारा वेद, पुराण, शास्त्र, धर्म, साधु-सन्तों तथा पुरातन भारतीय संस्कृति के आदर्शों का उपहास किया जा रहा था।

तुलसी लोक नायक थे। नानापुराणों और निगमागमों का उन्होंने अध्ययन किया था। उन्होंने तत्युगीन सभी काव्य-पद्धतियों को अपनाया था। उनकी काव्य-पद्धति का अध्ययन करने से उनके समन्वयात्मक दृष्टिकोण का परिचय मिलता है, जो अग्रांकित हैं-

(1) निर्गुण और सगुण का समन्वय-

तुलसी से पूर्व ब्रह्म के निर्गुण और सगुण स्वरूप पर पर्याप्त विवाद चला। यह विवाद भक्ति और दर्शन दोनों क्षेत्रों में रहा। कबीर ने सगुण ब्रह्म का खंडन करते हुए निर्गुण ब्रह्म की महिमा का का प्रतिपादन किया। भक्त चूड़ामणि तुलसी ने इस मतभेद को समाप्त करने के लिए निर्गुण और सगुण में आकर्षक समन्वय स्थापित किया-

सगुनहि अगुनहि नहिं कछु भेदा। गावहिं मुनि पुरान बुध बेदा॥
अगुन अरूप अलख अज जोई। भगत प्रेम बस सगुन सो होई॥

तुलसी ने निर्गुण और सगुण को अप्रकटित तथा प्रकटित आभा बताते हुए कहा-

एकु दारुगत देखिअ एकू। पावक सम जुग ब्रह्म बिबेकू॥

(२) ज्ञान और भक्ति का समन्वय -

भक्तिकाल में ज्ञानी और भक्त के चिंतन में पर्याप्त विभेद था। ज्ञानी अपने को श्रेष्ठ और भक्त को निम्न समझते थे, तो भक्त इसके ठीक विपरीत स्वयं को श्रेष्ठ और ज्ञानी को निम्न समझते थे। तुलसी ज्ञान के पथ को कृपाण की धार मानते हैं। भक्ति के लिए ज्ञान की महत्ता का प्रतिपादन करते हुए दोनों के समन्वय का प्रयास करते हैं -

भगतिहि ग्यानहि नहिं कछु भेदा। उभय हरहिं भव संभव खेदा॥

(3) शैव और वैष्णव का समन्वय -

भारतीय चिंतन में त्रिदेव का विशेष महत्व है। हमारे भक्ति-दर्शन में विष्णु के उपासक वैष्णव और शिव के उपासक शैव कहलाए। कालांतर में दोनों मतावलंबियों में मतभेद उभर आया। वैष्णवों के द्वारा विष्णु को सर्वशक्तिमान बताया गया और शिव की उपेक्षा की गयी, तो शैवों के द्वारा शिव को परमतत्व मानकर विष्णु की उपेक्षा की जाने लगी। तुलसी ने शैव और वैष्णव का समन्वय कर जहाँ एक ओर शिव को विष्णु के अवतार राम का उपासक दिखलाकर उनसे यह कहलवाया -

सोइ मम इष्ट देव रघुबीरा। सेवत जाहि सदा मुनि धीरा॥

वहीं दूसरी ओर शिव को भगवान राम के आराध्य बतलाकर राम के मुँह से उनकी महिमा का गान करवाया -

सिव द्रोही मम दास कहावा। सो नर मोहि सपनेहुँ नहिं भावा।।

(4) राजा और प्रजा का समन्वय-

तुलसी के समय राजा और प्रजा के बीच बहुत अधिक दूरी हो गयी थी। विदेशी शासकों की क्रूरता और कठोरता के कारण यह दूरी द्वेष और वैरी में परिणत हो चुकी थी। हेय भावना यहाँ आग में घी का काम कर रही थी। तुलसीदास जानते हैं कि देश की सुख-समृद्धि के लिए राजा और प्रजा का समन्वय अनिवार्य है। तुलसी ने राजा-प्रजा के समन्वय से रामराज्य की मनभावन कल्पना की है। उन्होंने रामराज्य में प्रजा को पूरा अधिकार दिया है। नीति पर चलना राजा का धर्म है। रामराज्य में अनीति पर चलने या अनैतिक बात बोलने पर राजा को रोक देने का अधिकार प्रजा को है-

नहिं अनीति नहिं कछु प्रभुताई। सुनहु करहु जो तुम्हहि सोहाई।
सोइ सेवक प्रियतम मम सोई। मम अनुशासन मानै जोई।।
जौ अनीति कछु भाषौं भाई। तौ मोहि बरजहु भय बिसराई।।

(5) विद्या माया और अविद्या माया का समन्वय-

विद्या माया कल्याणकारी तत्व है और अविद्या माया संसारिक प्रपंच की प्रतीक है। तुलसी ने दोनों का अनुपम समन्वय किया है। तुलसी के काव्य में वर्णित विद्या माया जहाँ संसार-रचना और भक्त कल्याण की आधार है-

आदिसक्ति जेहि जग उपजाया। सोउ अवतरिहि मोरि यह माया।।

वहीं अविद्या माया मनुष्य को भ्रमित करती है। इसलिए तुलसी ने इसे त्याज्य माना है-

व्यापि रहेउ संसार महुँ माया कटक प्रचंड।
सेनापति कामादि भट दंभ कपट पाषंड ।।

(6) व्यक्ति और समाज का समन्वय-

परिवार समाज शिक्षा की प्रथम और महत्वपूर्ण पाठशाला है। परिवार समाज की संपूर्णता का सर्वोत्कृष्ट आधार है। व्यक्ति-निर्माण और विकास में परिवार की महत्ती भूमिका है। तुलसी ने अपनी रचनाओं में व्यक्ति और समाज का अद्भुत समन्वय दर्शाया है। उनके काव्य के विभिन्न पात्रों में पारिवारिक सौहार्द और आपस में स्नेह-भाव प्रकट होता है। राम अपने भाइयों से प्रेम करते हैं, वे सब राम को भी उतना आदर करते हैं। राम अपने पिता महाराज दशरथ का जितना सम्मान करते हैं, उससे उतना स्नेह प्राप्त करते हैं। राम के विरह में सारे अवधवासी व्यथित हैं, राम भी भरत, लक्ष्मण और सीता के दुख से दुखी हैं-

हित उदास रघुवर बिरह बिकल सकल नर नारि।
भरत लखन सिय गति समुझि प्रभु चख सदा सुबारि।।

(7) वर्णाश्रम धर्म और मानवतावाद का समन्वय-

तुलसीदास के काव्य में वर्णाश्रम व्यवस्था को पर्याप्त समर्थन मिला है। वर्ण और आश्रम के विखंडन से तुलसी दुखी है। इसका संकेत करते हुए वे कहते हैं-

बरन धर्म नहिं आश्रम चारी। श्रुति विरोध रत सब नर नारी।।
द्विज श्रुति बेचक भूप प्रजासन। कोउ नहिं मान निगम अनुसासन।।

BSE - I

तुलसीदास

Unit - III

अयोध्याकाण्ड :-

(1) श्रीगुरु चरन सरोज रज निज मनु मुकुरु सुधारि।
बरनउँ रघुबर बिमल जसु जो दायकु फल चारि॥

भावार्थ :-

तुलसीदास यहाँ पर कहते हैं कि श्रीरामचन्द्र जी के चरण को कमल के साथ तुलना किया गया है। तुलसीदास अपने प्रभु श्रीरामचन्द्र जी के चरण कमल रूपी धूल से अपने मन रूपी दर्पण को साफ करना चाहते हैं अर्थात अपने मन में जो अहंकार है उसे साफ करना चाहते हैं और अपने प्रभु श्रीरामचन्द्र जी के उस निर्मल यश का वर्णन करता हूँ जो चारों लोक में प्रसिद्ध धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष देनेवाला है।

(2) जब तें रामु ब्याहि घर आए। नित नव मंगल मोद बधाए॥
भुवन चारिदस भूधर भारी। सुकृत मेघ बरषहिं सुख बारी॥

भावार्थ :-

तुलसीदास यहाँ पर कहते हैं कि जबसे श्रीरामचन्द्र जी विवाह करके घर (अयोध्या) आए हैं, तब से (अयोध्या में) आनंद के बाजे बज रहे हैं, नित्य नए मंगल गीत गाया जा रहा है, आनंद उत्सव मनाया जा रहा है। चौदहों लोक रूपी बड़े भारी पर्वतों पर पुण्य रूपी मेघ सुख रूपी जल बरसा रहे हैं।

(3) रिधि सिधि संपति नदीं सुहाई। उमगि अवध अंबुधि कहुँ आई॥
मनिगन पुर नर नारि सुजाती। सुचि अमोल सुंदर सब भाँती॥

भावार्थ :-

तुलसीदास यहाँ पर कहते हैं कि जबसे श्रीरामचन्द्र जी विवाह करके घर आए हैं तब से ऋद्धि-सिद्धि और सम्पत्ति रूपी जो दो नदियाँ हैं वह भी उमड़-उमड़कर अयोध्या रूपी समुद्र से आके टकरा गयी है यानि मिल गयी है। अर्थात ऋद्धि-सिद्धि नामक जो दो नदियाँ नदियाँ वह भी श्रीरामचन्द्र जी के विवाह

करके घर आने से आनंद और उत्सव मना रहा है। अयोध्या के जो स्त्री-पुरुष है वह मणियों के समान है यानी मणियों के समान चमक रहे है। जो सब प्रकार से अमूल्य, पवित्र, अनमोल, सुंदर है। सभी प्रकार से दिखने में वह सुंदर दिख रहे हैं।

(4) कहि न जाइ कछु नगर बिभूती। जनु एतनिअ बिरंचि करतूती ॥
सब बिधि सब पुर लोग सुखारी। रामचंद मुख चंदु निहारी ॥
भावार्थ:-

तुलसीदास यहाँ पर कहते है कि जब से श्रीरामचन्द्र जी विवाह करके घर आए है तब से नगर का ऐश्वर्य कुछ कहा नहीं जाता अर्थात नगर का ऐश्वर्य बहुत ही बढ़ गया है। उसे देखकर ऐसा लगता है कि मानो ब्रह्माजी की कारीगरी बस इतनी ही है अर्थात ब्रह्माजी ने मानो अयोध्या को ही बनाया है, जो सब प्रकार से पवित्र है, सुंदर है और अनमोल है। सब नगर निवासी श्री रामचन्द्रजी के मुखचन्द्र को देखकर सब प्रकार से सुखी है।

(5) मुदित मातु सब सखीं सहेली। फलित बिलोकि मनोरथ बेली ॥
राम रूपु गुन सीलु सुभाऊ। प्रमुदित होइ देखि सुनि राऊ ॥
भावार्थ:-

तुलसीदास यहाँ पर कहते है कि अयोध्या के माताएँ और सखी-सहेलियाँ अपनी मनोरथ रूपी बेल को फली हुई देखकर आनंदित है। श्री रामचन्द्रजी के रूप, गुण, शील और स्वभाव को देख-सुनकर राजा दशरथजी बहुत ही आनंदित होते है।

(6) सब के उर अभिलाषु अस कहहिं मनाइ महेसु।
आप अछत जुबराज पद रामहि देउ नरेसु ॥
भावार्थ:-

तुलसीदास यहाँ पर कहते है कि अयोध्या के नगरवासी के हृदय में बस एक ही अभिलाषा है कि महादेवजी को प्रार्थना करके कहते है कि राजा अपने जीते जी श्री रामचन्द्रजी को युवराज पद दे दें।

(7) एक समय सब सहित समाजा। राजसभाँ रघुराजु बिराजा ॥
सकल सुकृत मूरति नरनाहू। राम सुजसु सुनि अतिहि उछाहू ॥
भावार्थ :-
तुलसीदास यहाँ पर कहते हैं कि एक समय रघुकुल के राजा दशरथजी अपने सारे समाज सहित राजसभा में विराजमान थे। महाराज समस्त पुण्यों की मूर्ति हैं, उन्हें श्री रामचन्द्रजी का सुंदर यश सुनकर अत्यन्त आनंद हो रहा है। अपने पुत्र रामजी के गुण, स्वभाव, यश को सुनकर उन्हें बड़ा मोहसुस हो रहा है।

(8) नृप सब रहहिं कृपा अभिलाषें। लोकप करहिं प्रीति रुख राखें ॥
तिन तीनि काल जग माहीं। भूरिभाग दसरथ सम नाहीं ॥
भावार्थ :-
तुलसीदास राजाओं के माध्यम से कहते हैं कि सब राजा दशरथ जी की कृपा चाहते हैं और लोकपालगण उनके रुख को रखते हुए प्रीति करते हैं क्योंकि राजा दशरथ उनकी सभी इच्छाओं को पूरा करते हैं। पृथ्वी, आकाश, पाताल तीनों भुवनों में और भूत, भविष्य, वर्तमान तीनों कालों में दशरथजी के समान बड़भागी कोई नहीं है।

(9) मंगलमूल रामु सुत जासू। जो कछु कहिअ थोर सबु तासू ॥
रायँ सुभायँ मुकुरु कर लीन्हा। बदनु बिलोकि मुकुटु सम कीन्हा ॥
भावार्थ :-
तुलसीदास यहाँ पर राजा दशरथ जी के बारे में कह रहे हैं कि मंगलों के मूल श्री रामचन्द्रजी जिनके पुत्र हैं उनके लिए जो कुछ भी कहा जाए सब थोड़ा है। राजा दशरथ जी ने स्वाभाविक ही हाथ में दर्पण ले लिया और उसमें अपना मुँह देखकर मुकुट को सीधा किया ॥

(10) श्रवन समीप भए सित केसा। मनहुँ जरठपनु अस उपदेसा ॥
नृप जुबराजु राम कहुँ देहू। जीवन जनम लाहु किन लेहू ॥
भावार्थ :-
तुलसीदास यहाँ पर कहते हैं कि राजा दशरथ अपने

हाथ में दर्पण लेकर देखा कि उनके कानों के पास बाल सफेद हो गए हैं, तब राजा दशरथ जी सोच रहे हैं कि उनका बुढ़ापा नजदीक आ गया है। मानो बुढ़ापा ऐसा उपदेश कर रहा है कि हे राजन्! श्री रामचन्द्रजी को युवराज पद देकर अपने जीवन और जन्म का लाभ क्यों नहीं लेते।

(11) यह बिचारु उर आनि नृप सुदिनु सुअवसरु पाइ।
प्रेम पुलकि तन मुदित मन गुरहि सुनायउ जाइ॥

तुलसीदास यहाँ पर कहते हैं कि राजा दशरथ हृदय में यह विचार लाकर कि श्रीरामचन्द्र जी को युवराज पद सौंप दिया जाए। राजा दशरथजी शुभ दिन और सुंदर समय पाकर, प्रेम से पुलकित शरीर हो आनंदमग्न मन से गुरु वशिष्ठ जी के पास जाते हैं। यह शुभ समाचार सुनाने के लिए कि श्रीरामचन्द्र जी को युवराज पद सौंप दिया जाए।

(12) कहइ भुआलु सुनिअ मुनिनायक। भए राम सब बिधि सब लायक॥
सेवक सचिव सकल पुरबासी। जे हमार अरि मित्र उदासी॥

तुलसीदास यहाँ पर कहते हैं कि राजा दशरथ गुरु वशिष्ठ के पास जाकर कहा - हे मुनिराज! सुनिए। श्री रामचन्द्रजी अब सब प्रकार से योग्य हो गए हैं। अयोध्या के सेवक, मंत्री, सब नगर निवासी और जो हमारे शत्रु मित्र वह सब श्रीरामचन्द्रजी को लेकर उदासीन हैं।

(13) सबहि रामु प्रिय जेहि बिधि मोही। प्रभु असीस जनु तनु धरि सोही॥
बिप्र सहित परिवार गोसाईं। करहिं छोहु सब रौरिहि नाईं॥

तुलसीदास यहाँ पर कहते हैं कि सभी को श्री रामचन्द्र वैसे ही प्रिय हैं, जैसे वे मुझको हैं। आपका आशीर्वाद ऐसे मानो शरीर धारण करके शोभित हो रहा है। हे स्वामी सारे ब्राह्मण, परिवार सहित आपके ही समान उन पर स्नेह करते हैं।

(14) जे गुर चरन रेनु सिर धरहीं। ते जनु सकल बिभव बस करहीं॥
मोह सम यहु अनुभयउ न दूजें। सबु पायउँ रज पावनि पूजें॥

तुलसीदास यहाँ पर कहते हैं कि जो लोग गुरु के चरणों की रज को मस्तक पर धारण करते हैं, वे मानो समस्त ऐश्वर्य को अपने वश में कर लेते हैं। इसका अनुभव मेरे समान दूसरे किसी ने नहीं किया। आपकी पवित्र चरण रज की पूजा करके मैंने सब कुछ पा लिया।

(15) अब अभिलाषु एकु मन मोरें। पूजिहि नाथ अनुग्रह तोरें॥
मुनि प्रसन्न लखि सहज सनेहू। कहेउ नरेस रजायसु देहू॥

तुलसीदास यहाँ पर कहते हैं कि अब मेरे मन में एक ही अभिलाषा है। हे नाथ! वह भी आप ही के अनुग्रह से पूरी होगी। राजा का सहज प्रेम देखकर मुनि ने प्रसन्न होकर कहा - नरेश! आज्ञा दीजिए।

(16) राजन राउर नामु जसु सब अभिमत दातार।
फल अनुगामी महिप मनि मन अभिलाषु तुम्हार॥

तुलसीदास यहाँ पर कहते हैं कि हे राजन! आपका नाम और यश ही सम्पूर्ण मनचाही वस्तुओं को देने वाला है। हे राजाओं के मुकुटमणि! आपके इच्छा करने के पहले ही फल उत्पन्न हो जाता है।

(17) सब बिधि गुरु प्रसन्न जियँ जानी। बोलेउ राउ रहँसि मृदु बानी॥
नाथ रामु करिअहिं जुबराजू। कहिअ कृपा करि करिअ समाजू॥

तुलसीदास यहाँ पर कहते हैं कि अपने जी में गुरुजी को सब प्रकार से प्रसन्न जानकर, हर्षित होकर राजा कोमल वाणी से बोले - हे नाथ! श्री रामचन्द्र को युवराज कीजिए। कृपा करके कहिए (आज्ञा दीजिए) तो तैयारी की जाए।